International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 17-12-2019; Accepted: 18-01-2020; Published: 20-02-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 2; 2020; Page No. 36-37

मानव–मूल्यः आधुनिक जीवन की उलटवाँसी (कबीरबानी के सन्दर्भ में)

डॉ0 सरिता चौहान
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, एमसीएम डीएवी महिला–कॉलेज, सेक्टर 36–ए, चण्डीगढ़, भारत।

प्रस्तावना

भारतीय दर्शन के अनुसार यह ब्रह्मांड आद्यतन एक सुर लय में स्पन्दित होता है और आनन्द का हेतु बनता है। जब–जब इस सृष्टि के नियमों, सुर–लय एवं अनुशासन में अवरोध उत्पन्न होता है तब–तब मानव जीवन दुख एवं पीड़ा के अंधकार में घिर जाता है। दुखों, कष्टों एवं पीड़ाओं को सुख में परिवर्तित करने का प्रयत्न प्रत्येक युग एवं समाज में होता रहा है क्योंकि आनन्द एवं सुख प्रत्येक मनुष्य के जीवन का आधारभूत तत्त्व है। प्रश्न उठता है कि मानव जीवन पीड़ाओं से मुक्त कैसे हो? इस प्रश्न का उत्तर भक्ति कालीन निर्गुण मार्गी सन्त कबीर की बानी में सहज ही प्राप्त हो जाता है। कबीर ने मानव–मूल्यों का सहारा लेकर मनुष्य की मनुष्यता को जगाया है। समाज को मानव मूल्यों की थाती प्रदान करते हुए कबीर एक आदर्श एवं शांतिप्रिय समाज की स्थापना पर बल देते हैं।

कबीर ने समाज की विसंगतियों पर प्रहार करने के लिए उलटवाँसियों को माध्यम बनाया। उलटवाँसियों के माध्यम से वे संसार को जीवित मृत्यु अर्थात् सांसारिक जीवन को जीते हुए विषय– विकारादि से मुक्ति का संदेश देते हैं। वर्तमान की उलटवाँसी यह है कि यहाँ भोगी दुख पाता है और योगी आनन्द। मछली जल में प्यासी है और मनुष्य भीड़ में अकेला है। पीड़ाओं से मुक्ति के अनेकानेक उपाय उसे दिग्भ्रमित करते हैं और वह उनमें उलझकर रह जाता है। कबीर की बानी में व्यष्टि के परिष्कार के माध्यम से समष्टि के परिष्कार की भावना परिलक्षित होती है। कबीर की बानी में मानव–मूल्यों की पड़ताल करने से पूर्व मानव–मूल्यों पर विचार कर लेना आवश्यक है।

प्रत्येक युग नये मूल्यों की खोज करता है ओर नये जीवन–मूल्यों का सृजन भी करता है। ''जिन गुणों को मानव समाज अपने उत्कर्ष हेतु सामुहिक स्वीकृति प्रदान करता है, वे मानव–मूल्य हैं। इसकी परिधि में दया, करूणा, ममता, सहयोग, प्रेम, भातृत्व–भाव आदि सद्गुणों का समावेश होता है। जिस समाज की जैसी अवस्था होती है, उन मानवीय गुणों का विकास भी तद्नुसार होता है और उसका प्रतिबिम्ब उस समाज के लोक साहित्य में प्रतिबिम्बित होता है।''[1] वास्तव में मूल्य मार्गदर्शक सिद्धांत हैं, जो मानवीय व्यवहारों एवं क्रियाओं को प्रभावित करते हैं। ''मानव–मूल्य शब्द की व्युत्पत्ति पर विचार करें तो इसमें दो शब्द निहित हैं– (1) मानव (2) मूल्य। मानव शब्द की व्युत्पत्ति 'मनु' में 'अव' प्रत्यय लगाने से होती है।... मूल्य शब्द की व्युत्पत्ति मूल धातु में यत् प्रत्यय लगाने से होती है। मूल्य का सम्बन्ध प्रतिमान से होता है। इसलिए मानव जीवन के जिस क्षेत्र में हम जिस मानक की स्थापना करेंगे 'मूल्य' वहाँ स्वमेव प्रतिष्ठित हो जाते हैं। वस्तुतः मूल्य कोई मूर्त वस्तु नहीं अपितु एक धारणा हैं इसका आधार विचार है ओर विचार का आधार है विवेक।''[2]

साहित्य का शाश्वत मूल्य है– मनुष्यता अथवा मानवीयता। जो साहित्य मानवीय मूल्यों की बात करता है, उनकी स्थापना करता है वह कालजयी एवं सार्वभौमिक होता है। मानवीय मूल्य मनुष्य को पशुता से उठाकर विवेक, चेतना और सद्गुणों से सम्पृक्त करते हैं। ''मानव –मूल्य मानवता की सच्ची कसौटी हैं। वे मनुष्य को जीवन के आदर्श लक्ष्यों की ओर उन्मुख करते हैं और उसे उसके लक्ष्यों तक पहुँचाने के सोपान बनते हैं।''[3] निस्संदेह मानव–मूल्यों से युक्त साहित्य आदर्श समाज की स्थापना में महत्त्वपूर्ण योगदान देता है। खेद का विषय है कि आज हम सभी मूल्य–संकट के दौर से गुजर रहे हैं। मूल्य–संकट से मानव की मूल्यों में आस्था समाप्त हो जाती है। सबसे घातक स्थिति तो यह है कि इसमें मानवीय सम्बन्ध एवं संवेदनाऐं मृतप्राय हो जाती हैं। आधुनिक युग हम सभी को 'साधना'' के दौर से निकालकर 'साधनों' की दुनिया में ले आया है। आज हम सभी मूल्यों के विघटन का तमाशा देख रहे हैं। माया आज सम्बंधों को संचलित करने की धुरी बन गई है। यंत्रवत होते जीवन से सहज मानवीय संवेदनाऐं, जो मानव जीवन का आधार हैं, सिरे से ग़ायब होती जा रही हैं। ऐसे में मानवीय मूल्यों से युक्त साहित्य एक आदर्श समाज की स्थापना में महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

मानव–मूल्यों की दृष्टि से यदि हम भक्तिकाल के प्रमुख निर्गुण सन्त कबीर अथवा कबीरदास की बानी का विश्लेषण करें तो हम पाते हैं कि कबीरबानी मानवीय सरोकार के सर्वोच्च मूल्यों की संस्थापिका है। कबीर के सारे आग्रह एवं प्रयास मनुष्य एवं जगत को सँवारने के लिए थे। उनकी सोच एवं चिन्ताओं का केन्द्र मनुष्य और इस जगत के अन्य प्राणी रहे हैं। निस्संदेह कबीर चिन्तन की 'रेन्ज' बहुत व्यापक है। मानव, पेड़–पौधे, जीव–जन्तु, पक्षी आदि सभी उसमें शामिल हैं। वस्तुतः ''कबीर के पाठ के भीतर अनेकों पाठ हैं जो आज के सन्दर्भों में और भी बेहतर ढ़ंग से खुलते हैं। उनमें इतिहास के नए क्षितिजों में फैलने की भरपूर सम्भावनाऐं हैं। आज की जो चुनौतियाँ हैं उनमें कबीर के पाठ को समझने की नई दृष्टि प्राप्त होती है।''[4]

समाज को कबीर की देन अमूल्य हैं। सत्यनिष्ठा, अहिंसा, प्रेम, त्याग एवं समदृष्टि आदि उदात्त भावनाओं के माध्यम से कबीर अपने समाज में फैली कुरीतियों एवं धर्मान्धता से टकराए। कबीर ने उच्च जातियों के वर्चस्व को चुनौती दी और उनके ज्ञान के एकाधिकार को तोड़ा। कबीर कहते हैं– ''जाति ना पूछो साध की, पूछ लीजिए ज्ञान।''[5] ऐसा कहकर वे सृजन के क्षेत्र में जाति की जगह मनुष्यत्व को प्रतिष्ठित करते हैं। व्यष्टि के माध्यम से समष्टि के परिष्कार का प्रयास वास्तव में किसी भी समाज के लिए उदाहरण सिद्ध हो सकता है। अपनी बानियों से कबीर ने जनसाधारण का ध्यान उन मानवीय गुणों की ओर खींचा जिनके अभाव में मनुष्य और पशु में कोई अन्तर नहीं रह जाता। डॉ0 शिवकुमार मिश्र का मानना है कि ''कबीर के समाज–दर्शन को छूने में भी व्यवस्था के प्रभु घबराते हैं कारण वह बेहद वेधक तथा व्यवस्था के सीने पर शूल की तरह चुभने वाला है।''[6]

अत्यधिक धन–संग्रह को कबीर पाप की जड़ मानते हैं। वे न्यूनतम चाहते हैं। असीमित द्रव्य लालसा और अंधी–दौड़ से त्रस्त मानव को कबीर सन्तोष का पाठ पढ़ाते हैं। वे लोभी को समझाते हुए कहते हैं–

''सीस चढ़ाये पोटली, ले जात न देख्या कोई।''[7]

धन– संग्रह की अंधी दौड़ से बाहर निकलने का रास्ता सुझाते हुए कबीर कहते हैं – ''संत न बाँधे गाँठड़ी, पेट समाता लेइ।''[8]
कबीर गठरी बांधने के नहीं, पेट समाता लेने के हिमायती हैं। वे बाँट कर खाने में विश्वास रखते हैं आज की गलाकाट प्रतिस्पर्धा एवं आर्थिक असमानता जैसी घोर विपरीत परिस्थितियों में यह सूत्र निस्संदेह 'बड़े काम का' है।
''कबीर चाहते हैं कि आवश्यकताएँ सीमित हों, मानव में संतोष की भावना हो क्योंकि सन्तोष को ही वे वास्तविक धन मानते हैं। उनकी दृष्टि में गोधन, गजधन, बाजिधन और रत्नधन से भी संतोष धन बड़ा है, मूल्यवान है।वह आता है तो ये सारे धन धूल जैसे प्रतीत होने लगते हैं। इसलिए वे निर्द्वन्द्व और निःशंक होकर हाथ उठाकर कहते है कि जो तृष्णा रहित हैं, जिसमें याचकता का भाव नहीं, जिसके मन में कोई चाह नहीं, जो बेपरवाह हैं वे संसार के सबसे सुखी प्राणी हैं–

''चाह गई चिंता मिटी मनुवा बेपरवाह
जिनको कछू न चाहिए सब साहब पतिसाह।''[9]

कबीर प्रासंगिक हैं क्योंकि वे मानव–मूल्य स्थापित करते हैं वे ह्रदय की निर्मलता, निष्कपटता एवं आचारण की पवित्रता पर बल देते हैं। कबीर सभी प्रकार के छल–कपट एवं अनाचार के विरोधी हैं। कबीर न भाषा के छल को स्वीकार करते हैं न वेशभूषा के। ''न वे पूजा में कपट को मान्यता देते हैं न नमाज़ में। माला, जप, मूर्तिपूजा, तीर्थ, व्रत, ऊँच, नीच, स्थान, ध्यान, रोज़ा, नमाज़, ख़तना आदि सब कबीर को पाखंड लगते हैं, इसलिए वे पाती खाने वाली बकरी की कुर्बानी देने वाले मुल्ला को ललकारते हैं और माला के साथ मन को दसों दिशाओं में फिराने वाले पंडित को भी।''[10]
'सवै जीव सांई के प्यारे' कहकर कबीर ने समूचे जीवन–जगत को एकसूत्र में बाँध दिया। ''बकरी पाती खाती है, बाकी काढ़ी खाल। जो जन बकरी खात हैं तिनको कौन हवाल।।''[11] कहकर इस ओर संकेत किया हैं कि ''हिंसा किसी भी रूप में हो, उससे फिर कई हिंसा–क्रम निकलते हैं। जो विकसित होते–होते, सार्वजनिक, सार्वभौम और सर्वभक्षी हिंसा तक पहुँचते हैं। विश्व का वर्तमान हिंसा–हत्या का विराट परिप्रेक्ष्य इसका गवाह है। कबीर ने ऐसी तर्कना विकसित की जिसकी काट सहज सम्भव नहीं। इस तर्कशील संवेदना के सामने मज़हबी, जातिवादी, कट्टरता के मजबूत दुर्ग ढहते–डगमगाते मिले। रूढ़, जड़ आचरण एवं वैचारिक अन्धता और तर्कहीन अन्धी आस्था पद्धतियों के आगे ऐसे प्रश्नचिह्न खड़े कर दिये कबीर ने, जिनसे बच निकलना आसान नहीं।''[12]
वास्तव में कबीर–बानी में व्यक्त मानव–मूल्य हमें जीवन और जगत में संतुलन की कला सिखाते हैं। निस्संदेह धर्म और जाति की संरचनाओं का अतिक्रमण करके ही मानवीय आधार पर नए समाज का संघटन खोजा जा सकता है। समूचे विश्व को अपनी आध्यात्मिक अनुभूति और मानवीय संवेदनशीलता में पुनः बाँधने वाले कबीर आज सर्वथा अपरिहार्य हो गए हैं। सारांश यह है कि कबीरबानी में व्यक्त मानव–मूल्य आधुनिक मानव के कष्टों, पीड़ाओं एवं संकटो को समाप्त करने के अमोघ अस्त्र हैं। एक स्वस्थ एवं समानता पर आधारित शोषणरहित समाज की स्थापना के अनेको सूत्र कबीरबानी में उपलब्ध हैं, आवश्यकता है सिर्फ उन्हे खोजने की–

''सौ पावेगा लाल जाइके गोता मारै।
मरजीवा है जाय लाल को तुरन्त निकारै।।''[13]

सन्दर्भ सूची

1. पंचशील शोध समीक्षा (त्रैमासिक पत्रिका) सम्पादक– डॉ0 हेतु भारद्वाज, अंक–12, अप्रैल–जून, 2011, पंचशील प्रकाशन जयपुर, पृष्ठ–49
2. काहे कबीरा भया कबीर? डॉ0 विश्वबंधु शर्मा, सत्य प्रकाशन, सुभाष नगर दिल्ली, संस्करण–2000, पृष्ठ –72
3. सहृदय (त्रैमासिक पत्रिका), सम्पादक– डॉ0 पूरनचंद टन्डन, अंक–14, अक्तूबर– दिसम्बर, 2012, प्रकाशक– नव उन्नयन साहित्यिक सोसाइटी, नई दिल्ली, पृष्ठ–12
4. कबीरः दृष्टि– प्रतिदृष्टि, सम्पादक– डॉ0 राजेन्द्र टोकी, प्रकाशक– विमला बुक्स, दिल्ली, संस्करण–2009, पृष्ठ–15
5. कबीर ग्रन्थावली, सम्पादक–बाबू श्यामसुंदरदास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, संस्करण– सं0 2027 वि0, पृष्ठ–41
6. पूरा कबीर, सम्पादक, डॉ0 बलदेव वंशी, प्रकाशक–प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, संस्करण 2002, पृष्ठ–207
7. कबीर ग्रन्थावली, सम्पादक–बाबू श्यामसुन्दरदास, साखी 13, पृष्ठ–26
8. उपर्युक्त, बेसास को अंग, साखी–10, पृष्ठ–45
9. कबीर समग्र, सम्पादक– डॉ0 युगेश्वर, प्रथम खंड, पृष्ठ–441
10. कबीर दृष्टि– प्रतिदृष्टि, सम्पादक– डॉ0 राजेन्द्र टोकी, पृष्ठ–111
11. पूरा कबीर, सम्पादक–डॉ0 बलदेव वंशी, पृष्ठ–13
12. उपर्युक्त, पृष्ठ–13
13. पलटू साहिब की बानी (भाग–1) वेलवेडियर प्रेस, प्रयाग, पृष्ठ–53.